भारतीय पर्व और सांस्कृतिक एकता

रवीन्द्रनाथ मिश्र

संस्कृत में एक सूक्ति के अनुसार "उत्सव प्रियः मानवाः" यानी मनुष्य उत्सव प्रिय होते हैं । पर्व का संबंध उसकी संस्कृति से अभिन्न रूप में होता है । प्रत्येक समाज की अपनी अलग-अलग संस्कृति होती है और साथ ही साथ उसके त्योहार भी । मनुष्य और संस्कृति का संबंध बहुत पुरातन है । एक तरह से कह सकते हैं कि दोनों का जन्म साथ-साथ हुआ होगा । क्योंकि व्यक्ति के रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा, आचार-विचार, उसकी सोच-समझ एवं उसके पर्व, उत्सव, मांगलिक कार्यों आदि का संबंध उसकी संस्कृति से ही होती है । युग-परिवेश और विभिन्न समाजों की निर्मिती के साथ-साथ व्यक्ति एवं उसकी संस्कृति के स्वरूप में बदलाव आता गया, फिर भी उसमें कतिपय बातें ऐसी हैं, जो कि आज के भौतिक युग में भी एक दूसरे के अन्तर्मन को एक साथ जोड़े हुए हैं ।

'संस्कृति' वह सामान्य तौर-तरीका है, जिसके अनुसार मनुष्य सोचता-रहता और कार्य करता है । यानी अंग्रेजी में हम कह सकते हैं कि लिव, थिंक एण्ड एक्ट । किसी विद्वान ने कहा है कि "संस्कृति की व्याप्ति मानवीय सभ्यता के इतिहास सी प्राचीन, गतिशील और रसवंती है । स्थूल रूप से उसके क्षेत्र में सामान्यतः कला, धर्म और साहित्य आते हैं।"

प्रत्येक त्यौहारों की पृष्ठभूमि में कोई न कोई धार्मिक संकल्पना होती है । जिसका कि हमारे पौराणिक, धार्मिक ग्रन्थों एवं आख्यानों से गहरा संबंध होता है । बौद्धिक युग से लेकर आज तक पर्वों और धार्मिक यात्राओं आदि की लंबी परंपरा विद्यमान है, जिसके माध्यम से जनमानस मनोरंजन एवं आध्यात्मिक भूख को शांत करता आ रहा है । संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी एवं सभी आर्य और द्रविड़ परिवार की भाषाओं में विभिन्न भक्तों, संतों, आचार्यों, विचारकों एवं लेखकों ने पर्वों एवं धार्मिक यात्राओं का आकलन भी प्रस्तुत किया है ।

प्राचीन काल में आज की तरह मनोरंजन के इतने साधन नहीं थे इसलिए लोगों के मन में पर्वों के प्रति एक अजीब सी कौतूहलता, उल्लास और भाव होते थे । नमक, तेल और लकड़ी की जुगाड़ में रात-दिन मशक्कत करते हुए इंसान कुछ समय के लिए सारे दुःखों को भूलकर आपस में मिल-जुलकर खुशियाँ मनाते थे । आज भी उत्सवों की परंपरा विद्यमान है परंतु वह आकर्षण और लगाव नहीं है । मानसिक शांति प्राप्त करने के लिए इसकी महत्ता को रेखांकित किया जा रहा है । वास्तव में ये पर्व जहाँ एक ओर व्यक्ति को उसकी कुंठाओं और तनावों से मुक्ति प्रदान कर उसकी मनोरंजन की भूख को शांत करते हैं तो वहीं दूसरी और स्नेह, सद्भाव और सहबोध का सनातन

संदेश देकर हमारी सांस्कृतिक एकता को बाढ़ावा देते हैं ।

हमारा देश विभिन्नताओं और विविधताओं का देश है । यहाँ पर अनेक प्रकार के धर्म, भाषाएँ, जातियाँ, रीति-रिवाज और पर्व हैं । लोगों के अलग-अलग त्यौहार और उनकी धार्मिक मान्यताएँ हैं । राष्ट्रीय त्यौहार - जहाँ हमारी राष्ट्रीय चेतना एवं उसकी अस्मिता की पहचान कराते हैं तो वहीं पर धार्मिक उत्सव हमारी सांस्कृतिक परम्परा को सुदृढ़ कर आपस में भाई-चारे की भावना को बढ़ाकर सांस्कृतिक एकता को मजबूत करते हैं । रक्षाबंधन का स्नेहिल पर्व भाई-बहनों को स्नेह के सूत्र में आबद्ध कर आत्मीयता की भावना प्रदान करता है तो दशहरा अन्याय का दमन कर न्याय की विजय पताका फहराता है, असत्य पर सत्य और बुराई पर अच्छाई का संदेश देता है । दीपावली निराशा की घनी काली कुंठित रात में आशा और - आकांक्षा के दीप जलाती है । इसके साथ ही स्वच्छता और सद्भावना का पाठ भी पढ़ाती है । रंगों का पर्व होली सबके अंतर्मन को अनुराग के अमिट रंग में रंगकर आपस के दिलों को जोड़ने का कार्य करती है । यहीं पर ईद और क्रिसमस आपसी साम्प्रदायिक सद्भावना एवं बँधुत्व के भाव को विकसित करते हैं।

भक्तिकाल में हिंदुओं और मुसलमानों के बीच बढ़ते हुए मतभेद को दूर करने में जायसी और कबीर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । लोकजीवन में प्रचलित त्यौहारों का गुणगान कर जहाँ कबीर ने दोनों को खुदा का बंदा बताया, वहीं पर जायसी ने 'मानुष पेम भयो बैकुण्ठी' कहकर आपसी प्रेम एवं सहबोध पर बल दिया ।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान लोकमान्य तिलक ने गणेशोत्सव का प्रारंभ कर उसके माध्यम से राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक भावना को जाग्रत करने का प्रयास किया । आज भी इस उत्सव की लोकप्रियता दिन-प्रति दिन बढ़ती जा रही है । साम्प्रदायिक सद्भाव की दिशा में इसका विशेष महत्व है । अब यह उत्सव महाराष्ट्र तक सीमित न होकर अन्य प्रान्तों तक विस्तार पाता जा रहा है । शक्ति की देवी दुर्गा की पूजा अब पश्चिम बंगाल में न होकर लगभग सम्पूर्ण देश में होती है । इस प्रकार अन्य प्रान्तीय त्यौहार भी अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर राष्ट्रीय स्वरूप धारण कर रहे हैं ।

होली, दीपावली, दशहरा, रक्षाबंधन, क्रिसमस, ईद, लोहड़ी - वैशाखी, ओणम, नागपंचमी, तीज, जन्माष्टमी, कार्निवाल और सिग्मों आदि अनेक प्रकार के विविध प्रान्तों के विविध धार्मिक उत्सव हमारे देश में मनाए जाते हैं, जिसमें कि सभी धर्मों एवं प्रान्तों के लोग एक दूसरे के उत्सवों में भाग लेकर राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक एकता की भावना को बल प्रदान कर रहे हैं।

इन पर्वों और त्यौहारों का अपना बड़ा भारी महत्व है । ये वे अवसर हैं जब मनुष्य थोड़े समय के लिए अपने दुःखों को भूल जाता है । इन्हीं अवसरों पर लोग आज की भौतिक दुनिया में व्यस्त जीवन से थोड़ा समय निकालकर एक दूसरे के निकट आते हैं। इससे एक जीवंत समाज की भावना पुष्ट होती है । लोग एक-दूसरे से गले मिलकर शुभकामनाएँ देते हैं

और साथ ही एक दूसरे की सेवइयाँ और लड्डू खाकर दोस्ती का इजहार करते हैं ।

समाजिक परिवर्तन एवं मीडिया के प्रचार और प्रसार के कारण पर्वों और धार्मिक उत्सवों के प्रति लोगों की मानसिकता में बदलाव आ गया है । मीडिया द्वारा परोसी जा रही पाश्चात्य कुसंस्कृति सामाजिक जीवन को तहस-नहस कर रही है । दूरदर्शन हमारी मनोरंजन की भूख को घर में ही शांत कर दे रहा है । इसलिए पर्वों और उत्सवों के प्रति वह ललक एवं खिंचाव अब नहीं है जो कि पहले था । मनुष्य की व्यस्तता ने उसे बहुत संकुचित बना दिया है । पहले आर्थिक अभाव में भी मानसिक संतोष एवं पर्वों के प्रति काफी लगाव था । परंतु आज सबकुछ होते हुए भी लगता है कि कुछ नहीं है ।

ये पर्व हमें जिन मानवीय मूल्यों का पाठ पढ़ाते थे आज वे भौतिकता के प्रभाव के कारण निवपंद होते जा रहे हैं । प्रेम, करूणा, परोपकार, दंया, बन्धुत्व एवं सहबोध आदि जैसे मूल्य हम विभिन्न सम्प्रदायों के धार्मिक पर्वों में ही पाते हैं । प्रेम एक ऐसा मूल्य है जो कि रामायण, कुरान, गीता, बाइबिल और शबद आदि सभी धार्मिक ग्रन्थों में पाया जाता है । आखिरकार इन ग्रन्थों की कथाएँ ही तो हमारे विविध उत्सवों के स्त्रोत हैं ।

आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने परंपरागत सांस्कृतिक मूल्यों को पहचानकर भौतिकता की आंच से उन्हें दूर रखें, तभी हम मानवीयता की रक्षा कर सकेंगे अन्यथा जो मानवीय मूल्य हमारे धार्मिक एवं राष्ट्रीय उत्सवों में छिपे हुए हैं और जिनसे कि मानवता रक्षित होती चली आ रही है वे व्यर्थ एवं निर्मूल सिद्ध हो जाएँगे ।

पर्व मनुष्य जीवन के अभिन्न अंग हैं । विभिन्न पर्वों पर हमें एक दूसरे से मिलने-जुलने का अवसर प्राप्त होता है, जहाँ पर कि हम मन की कटुता को दूर कर आपस में गले मिलते हैं । आधुनिक युग में पर्वों का महत्व और बढ़ जाता है, क्योंकि इसके अन्तर्गत विद्यमान प्रेम, सद्भाव, एकता और सहबन्धुत्व आदि मानवीय मूल्यों के प्रति हमारी आस्था क्षीण होती जा रही है । इस संदर्भ में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक पर्वों की महत्ता और बढ़ जाती है ।

किसी भी समाज या राष्ट्र के उन्नति का आधार है उसमें रहनेवाले लोगों की विचार दृष्टि एवं उनकी सांस्कृतिक एकता, प्रेम, समभाव एवं सहबंधुत्व की शिक्षा जो कि हमें अपने धार्मिक पर्वों से ही प्राप्त होती है । इसलिए व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है जबकि उसमें भौतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का समन्वय हो ।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे पर्वों का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि इनके अन्तर्गत हमारी सांस्कृतिक एकता के बीज छिपे हुए हैं । हमें चाहिए कि हम आस्था और विश्वास के साथ इन्हें मनाकर जीवन्तता प्रदान करें, ताकि हमारी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक भावना का विकास हो सके ।